बुन्देलखण्ड अंचल की पारंपरिक वेशभूषा

डॉ. अपर्णा चाचोंदिया
सहा. प्राध्यापक - नृत्य
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश -

'वेशभूषा' किसी भी देश की सभ्यता एवं संस्कृति को दर्शाती है। यह एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा हम बिना किसी से मौखिक संवाद किये ही उसकी पहचान एवं निवास क्षेत्र का अनुमान लगा सकते हैं। किसी भी क्षेत्र विशेष को यदि हम जानना चाहते हैं, तो वहाँ रहने वाले लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाज, परम्पराएं, खान-पान एवं वस्त्राभूषण का अवलोकन करके स्वतः ही हम उस क्षेत्र के नाम का अनुमान लगाने लगते हैं। हमारे देश में प्रत्येक अंचल की अपनी एक विशिष्ट वेशभूषा है और उसे धारण करने का तरीका भी अलग है। इस शोध पत्र के माध्यम से बुन्देलखण्ड अंचल की पारंपरिक वेशभूषा का अध्ययन एवं संकलन करने का प्रयास किया गया हैं।

मुख्य शब्द - वेशभूषा, अंचल, परम्परागत।

भारत देश अपनी सांस्कृतिक विविधता के लिए विश्व विख्यात है। ये विविधता ही हमारे देश की संस्कृति को बहुरंगी बनाती है। हमारे देश में जितने भी राज्य हैं उनकी अपनी सांस्कृतिक पहचान है। हम पहली नज़र में ही किसी व्यक्ति की वेशभूषा को देखकर जान जाते हैं कि वह व्यक्ति भारत के किस राज्य से संबंधित है। यहाँ पर यह बात भी निश्चित रूप से ध्यान देने योग्य है कि केवल वेशभूषा ही नहीं अपितु उसके पहनने का तरीका भी मायने रखता है। जैसे यदि हमारे सामने पगड़ी पहने हुए कोई व्यक्ति खड़ा है तो उसके पगड़ी बाँधने के तरीके से हम पहचान सकते है कि वह व्यक्ति पंजाब से है या राजस्थान से। इसी तरह भारत के अधिकांश प्रांतों में महिलाओं द्वारा साड़ी पहनी जाती है, किन्तु विभिन्न प्रांतों में साड़ी के पहनने के तरीकों में पर्याप्त विविधता है, पहनावे की यही विविधता उस क्षेत्र विशेष की सांस्कृतिक विशेषता एवं उसकी पहचान बनकर उस क्षेत्र का परिचय देती हैं।

भारत देश की सांस्कृतिक एवं पारंपरिक वेशभूषा बहुत ही व्यापक विषय है क्योंकि वेशभूषा की विविधता भारत के विभिन्न राज्यों तक ही सीमित नहीं है बल्कि प्रत्येक प्रांत के छोटे-छोटे अंचलों में भी वेशभूषा में पर्याप्त विविधता है। इस शोध पत्र के माध्यम से केवल बुन्देलखण्ड अंचल की पारंपरिक वेशभूषा पर ही ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास किया गया है।

बुन्देलखण्ड की भौगोलिक स्थिति को हम संक्षिप्त रूप से जानने का प्रयास करेंगे क्योंकि बुन्देलखण्ड अंचल का क्षेत्र विस्तार केवल मध्यप्रदेश में ही नहीं कुछ जिले उत्तर प्रदेश के भी बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत आते हैं। मध्यप्रदेश के दमोह, पन्ना, सागर, टीकमगढ़, छतरपुर, दतिया आदि जिले एवं उत्तर प्रदेश के झाँसी, बांदा, ललितपुर आदि बुन्देलखण्ड अंचल में समाहित हैं। बुन्देलखण्ड का भौगोलिक सीमांकन करने वाली

कुछ उक्तियाँ इस क्षेत्र में प्रचलित हैं -

(1) इत चम्बल उत नर्मदा, इत जमुना उत टोंस।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काहु हौंस।।

(2) भैंस बंदी है ओरछा, पड़ा होशंगाबाद।
लगवैया है सागरै, चपिया रेवा पार।।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र की संस्कृति बहुत ही धनाढ्य है। इस अंचल का सम्पूर्ण सांस्कृतिक परिचय देना सीमित कार्य नहीं है, क्योंकि संस्कृति में भी बहुत से तत्व समाहित होते हैं इसलिए केवल वेशभूषा को ही आधार माना है एवं एकत्र सामग्री को दर्शाने का प्रयास किया गया है। बुन्देलखण्ड अंचल का पारंपरिक परिधान बहुत ही आकर्षक है, हालांकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसका चलन नहीं के बराबर है। ये परिधान दूरस्थ ग्रामीण अंचलों में ही थोड़े बहुत दिखाई देते हैं। पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण में हमारी संस्कृति लुप्त होती जा रही है। भावी पीढ़ी को अपनी संस्कृति से परिचित करवाने के लिए अभी से उसके संरक्षण के उपाय आवश्यक हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल की परम्परागत वेशभूषा को सही तरीके से समझने के लिए हम पहले इसका वर्गीकरण सुनिश्चित कर लेते हैं - स्त्रियों की पारंपरिक वेशभूषा एवं पुरूषों की पारंपरिक वेशभूषा। बुन्देलखण्ड में एक कहावत प्रचलित है -

लीपें पोतें दिहरी नोंनी, पहरें ओढ़े मेहरी नोंनी

जिस प्रकार लीपा-पोता मकान का दरवाजा अच्छा लगता है उसी प्रकार अच्छे कपड़े और गहने पहनने के बाद स्त्री सुंदर लगती है।[1]

अतः स्त्रियों के वस्त्राभूषण, अलंकार, रूपसज्जा आदि को बहुत महत्व दिया गया है। पारंपरिक वस्त्राभूषण से सुसज्जित स्त्रियों को अत्यंत शुभ माना जाता है एवं उन्हें घर की लक्ष्मी के रूप में सम्मान प्राप्त होता है। बुन्देलखंडी स्त्रियों द्वारा धारण किये जाने वाले वस्त्रों को उनके परम्परागत नाम से जानने का प्रयास करेंगे। यहां की महिलाओं द्वारा जो वस्त्र शरीर के ऊपरी भाग में धारण किया जाता है उनमें एक प्रचलित वस्त्र है - 'पोलका'। वैसे तो 'पोलका' वर्तमान में प्रचलित ब्लाउज़ के स्थान पर ही प्रयोग होता है, किन्तु आजकल के ब्लाउज़ एवं परंपरागत 'पोलका' की बनावट में बहुत अन्तर है। पोलका की लम्बाई कमर तक होती है। बहुत ज्यादा फिटिंग का नहीं होता ढीला-ढाला ही होता है। इसकी आस्तीन चुन्नटदार या फुग्गादार बनाई जाती है आकर्षक रंग संयोजन होता है जिसमें रंग के अनुकूल पाइपिंग का प्रयोग भी होता है। सामने की तरफ काज-बटन होते हैं। कुछ महिलाएं अपनी रूचि के अनुसार इसमें जेब भी बनवाती हैं और कमर के पास चुन्नदार करके उसमें कपड़े का वेल्ट जैसा बनवाती हैं। इसी तरह एक और परिधान है जिसे ब्लाउज़ के स्थान पर पहना जाता है उसका नाम है - 'सलूका' ये भी कमर तक लम्बाई की कुर्ती जैसा होता है एकदम ढीला-ढाला। आस्तीन कुहनी तक होती हैं किन्तु इसमें चुन्नट नहीं होती हैं। इनके अतिरिक्त चोली भी पहनी जाती है। अंगिया एवं कंचुकी महिलाओं के अन्तः वस्त्रों के रूप में प्रयोग होने वाले वस्त्र हैं। वर्तमान में ब्लाउज़ ही सर्वाधिक प्रचलित है, हालांकि पुराने फैशन की पुनरावृत्ति होने से कभी चुन्नटदार कभी कुहनी तक आस्तीन के ब्लाउज़ भी आजकल महिलाओं द्वारा धारण किये जाते हैं। अधोवस्त्र के रूप में 'घंघरा' मुख्य पोशक थी जिसे पोलका के साथ पहना जाता है इसके कई प्रकार प्रचलन में रहे हैं जिनमें से 'लहंगा' से सभी परिचित है ये सूती, रेशमी,

बनारसी आदि कपड़ों से तैयार किये जाते है कपड़ों की प्रिंट के आधार पर भी इनके नाम होते थे, जैसे छींट के बने लहंगे को 'छींट छिमरिया' कहा जाता था। जिसका उल्लेख बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोक कथाओं में मिलता हैं। छोटी बालिकाओं को घंघरिया अधोवस्त्र के रूप में पहनाई जाती थी। विवाह के समय चढ़ावे के लिए जो लहंगा बनवाया जाता था वह कीमती कपड़े का होता था एवं जड़ाऊ भी होता था। गोटा, सलमा, सितारे जड़े होते थे। घंघरा, लहंगा आदि अधोवस्त्रों के अतिरिक्त साड़ी का प्रचलन भी बुन्देलखण्ड में था जिसे 'धुतिया' कहा जाता है। पहले साड़ी के नीचे पेटीकोट पहनने का रिवाज नहीं था। इसलिए साड़ी या धुतिया का कपड़ा पर्याप्त मोटा होता था। धुतिया की लम्बाई के आधार पर उनका नाम होता था। जैसे आठ गज की अठगजी, नौ गज की नौगजी एवं बारह गज की बारागजी धोती कहलाती थी। धोती पहनने का तरीका भी बुन्देलखण्ड में विशिष्ट था। यहाँ पर कांछ लगाकर धोती पहनते थे जैसे महाराष्ट्रीयन महिलाएं पहनती है। किन्तु बुन्देलखण्डी कांछ वाली धोती पहनने का तरीका महाराष्ट्र की कांछ वाली साड़ी से अलग है। बुन्देलखण्ड में पल्ला सीधे हाथ के कंधे पर आता है जिसे सीधा पल्ला की साड़ी पहनना कहते हैं, जबकि मराठी महिलायें बांए हाथ के कंधे पर पल्ला रखती हैं, जिसे उल्टा पल्ला की साड़ी कहते हैं। कांछ लगाने के तरीके में भी विविधता है। कांछ लगाना मतलब 'लांघदार' दोनों पैरों के बीच से ले जाकर पीछे की ओर से कमर में कसे हुए साड़ी की किनार में अंदर की ओर दबा देते हैं। धुतिया एक रंग की या प्रिंटेड भी होती है किनारी भी चौड़ी पतली हो सकती है। साड़ी को पहनने के तरीके के आधार पर दो कंछयाऊ या कछौटेदार धोती बोलते हैं।

सिर पर ओढ़ने वाली चुनरी को भी उनके आकार, प्रकार आदि के आधार पर विभिन्न नामों से जाना जाता है। छोटी बालिकाओं को घंघरिया के साथ जो चुनरी डालते हैं उसे बुन्देलखण्ड में 'फरिया' कहा जाता है। महिलाओं के द्वारा सिर ढकने वाले वस्त्र को चुनरिया, उढ़निया नुंगरों (लुंगरों) आदि के नाम से जाना जाता है। चुनरी के भी ऊपर एक वस्त्र ओढ़नें का रिवाज है जिसे 'पिछौरा' कहा जाता है। आज भी विवाह के अवसर पर दुल्हन को 'पिछौरा' ओढ़ने का रिवाज हैं भांवरों के समय गठबंधन उसी से किया जाता हैं। पुराने समय में भद्र परिवार की महिलायें बिना पिछौरा ओढ़े घर से बाहर नहीं निकलती थी। अधोवस्त्र के रूप में जोरौं भी पहना जाता था। बिना कांछ लगाए पहनने वाली साड़ी के अंदर अधोवस्त्र के रूप में साया पहना जाने लगा जिसे पेटीकोट के नाम से अभी भी पहना जाता है।

बुन्देलखण्डी पुरूषों के वस्त्रों के भी अपने विशिष्ट नाम हैं इन्हें भी हम ऊर्ध्ववस्त्र और अधोवस्त्र में वर्गीकृत कर सकते हैं। लगभग सभी धर्मो में सिरपर कुछ न कुछ धारण करने का रिवाज है जैसे मुसलमानों में टोपी, पंजाबियों में पगड़ी आदि को सिर पर धारण किया जाता है। बुन्देलखण्ड में भी पुरूष वर्ग सिर पर पाग, सुवाफा आदि पहनते आए हैं और टोपी भी पहनी जाती थी जो नाव के आकार की होती थी। ये सभी विशेष अवसरों पर ही धारण किए जाते थे। आमतौर पर पुरूष वर्ग अपने सिर पर गमछा बांध लेते हैं या लपेट लेते है, जिसे आज भी हम ग्रामीण अंचलों में देख सकते हैं। अंतः वस्त्र के रूप में 'फतूमी' का चलन था इसमें सामने की तरफ तिरछे में एक जेव होता था। बंडी भी छोटी अस्तीन की कुर्ती जैसी होती थी। 'सदरी' जैकिट जैसी होती थी। 'मिरजाई' पूरी आस्तीन की होती थी, जो धागे से तगी होती थी। बगलबंदी, झोला या कुर्ता सभी का प्रयोग ऊर्ध्ववस्त्रों के रूप में किया जाता था। अंगोछा या गमछा कंधे पर डाले रहते थे।

अधोवस्त्र के रूप में परदनी या परदनियां पहनी जाती थी जिसे आज भी पहना जाता है कुछ लोग

ISSN 2395-051X

इसे धोती भी बोलते हैं जैसे बुन्देलखण्ड में धोती-कुर्ता पहना जाता है और सभी लोग वस्त्रों के इस नाम से भली भाँति परिचित भी है। धोती या परदनी के कम लम्बाई वाले कपड़े को 'पंचा' कहते है ये घुटनों तक ही रहता है इसे आम वर्ग के लोग धारण करते हैं जिससे उन्हें खेतों में काम करने में भी सहूलियत रहती है। पैरों में पनहयां पहनी जाती थीं। विवाह के अवसर पर पुरूष वर्ग द्वारा विशेष प्रकार की वेशभूषा धारण की जाती थी। सिर पर 'मौर' जो खजूर के पत्तों से निर्मित किया जाता था। 'बागौ एक लम्बा ढीला वस्त्र होता था। 'सेला' कंधे पर ध ारण करते थे, भांवरों के समय इसी वस्त्र से गठबंधन होता था। इसके अतिरिक्त अँगरखा और धोती का चलन भी रहा है। बदलते परिवेश में 'कमीज' को भी ऊर्ध्ववस्त्र के रूप में धारण किया जाने लगा। कुर्ते के साथ पैजामा भी पहना जाने लगा। नवजात शिशुओं को पहनाए जाने वाले वस्त्र झंगुलिया, पज्जी आदि नामों से जाने जाते थे। वस्त्रों पर आधारित कुछ लोकमान्यताएं भी बुन्देलखण्ड अंचल में प्रचलित हैं जैसे -

कपड़ा पैरो तीनई वार, बुद्ध विरस्पित और सुक्रवार।

अर्थात् नये वस्त्रों को धारण करने के लिए सप्ताह में से तीन ही दिनों को शुभ माना गया है - बुधवार, बृहस्पतिवार और शुक्रवार।

समय के साथ बहुत कुछ परिवर्तित हो गया मान्यताएं भी और वेशभूषा भी। सुदूर ग्रामीण अंचलों में ही कहीं पारंपरिक वेशभूषा देखने मिल जाए वह भी बुजुर्गो द्वारा भाग दौड़ भरी जिन्दगी में लोग सुविधानुसार अपने वस्त्रों का चयन करते हैं जो कि सारे देश में लगभग एक जैसा ही है जिस पर पश्चिमी सभ्यता और फिल्मी दुनिया का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। चूंकि संस्कृति ही हमारी पहचान है जो हमें विशिष्ट बनाती है और एक पहचान देती है इसलिए इसके संरक्षण के लिए हमें जागरूक रहना होगा नहीं तो यह लुप्त हो जाएगी और हम अपनी पहचान खो देंगे। इस शोधपत्र के माध्यम से बुन्देलखण्ड अंचल की पारंपरिक वेशभूषा का संकलन करने का प्रयास किया गया है। क्योंकि बुन्देली संस्कृति का लिखित साहित्य सीमित ही है अतः अध्ययन हेतु लिखित सामग्री उपलब्ध होना इतना सुलभ भी नहीं है। फिर भी वाचिक परम्परा से ही हमारी संस्कृति हस्तांतरित होती रही है जो कि घर के बुजुर्गो - दादा-दादी, नाना-नानी के द्वारा अनायास ही पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रही। मेरे लोक कला गुरू श्री विष्णु पाठक जी हमेशा कहा करते थे कि परिवार के बुजुर्ग चलती-फिरती लाइब्रेरी होते हैं उनके साथ समय व्यतीत करने से उनके अनुभवों का लाभ एवं कुछ न कुछ जानकारी निरंतर मिलती रहती है। इस शोध पत्र के लेखन में विषय-सामग्री के एकत्रीकरण में मुझे काफी लोगों के अनुभवों का लाभ प्राप्त हुआ जिनमें शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय सागर के हिन्दी विभागाध यक्ष डॉ. नरेन्द्र सिंह ठाकुर, सहायक प्राध्यापक डॉ. राजकुमार अहिरवार, एवं महाविद्यालय से ही श्री पुष्पेन्द्र पाण्डेय ने बुन्देलखण्ड की पारंपरिक वेशभूषा के बारे में काफी जानकारी दी। सागर के बाइसा मुहल्ला निवासी श्रीमती बेनीबाई अरेले जिनकी आयु 100 वर्ष से भी अधिक है, उनके द्वारा बुन्देलखण्ड के पारंपरिक वस्त्राभूषण से सम्बन्धित विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई।

सन्दर्भ -

1. पाण्डेय, डॉ. रामेश्वर प्रसाद - बुन्देलखण्ड संस्कृति और साहित्य, किताबघर प्रकाशन 4855-56/24, अंसारी रोड दरियागंज, नयी दिल्ली - 110002 संस्करण - 2016